महाबीर सिंह

बनाम

सुभाष और अन्य

12 अक्टूबर, 2007

[एस.बी. सिन्हा और हरजीत सिंह बेदी, जेजे.]

परिसीमा अधिनियम, 1963 - धारा 3 और अनुसूची - अनुच्छेद 123 - एकतरफा डिक्री को अपास्त कराने के लिए आवेदन पेश करने की परिसीमा- समन की तामील के बावजूद प्रतिवादी की अनुपस्थिति - एकपक्षीय डिक्री - डिक्री के निष्पादन के बाद उसे अपास्त करने के लिए आवेदन - प्रतिवादी स्वीकार करता है कि उसे इस तथ्य की जानकारी आवेदन पेश करने से डेढ़ वर्ष पहले थी - आवेदन की पोषणीयता - अभिनिर्धारितः आवेदन पोषणीय नहीं - प्रतिवादी स्वयं पर समन की तामील के अभाव काे साबित नहीं कर पाया- आवेदन परिसीमा से बाधित - सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 - आदेश 9 नियम 13।

अपीलार्थी द्वारा पेश वाद में प्रत्यर्थी/प्रतिवादी पर समन की तामील के बाद भी उपस्थित नहीं होने पर दिनांक 19.2.1986 को एकपक्षीय डिक्री पारित की गई। इसके आधार पर दिनांक 7.3.1996 को नामांतकरण खाेले जाने का आवेदन स्वीकार किया गया। प्रत्यर्थी ने एकपक्षीय डिक्री को अपास्त कराने के लिए दिनांक 7.2.1997 को आवेदन पेश किया। प्रत्यर्थी ने प्रतिपरीक्षण के दौरान स्वीकार किया कि उसने आवेदन पेश करने के डेढ वर्ष पूर्व डिक्री की पालना नहीं कराने के लिए अपीलार्थी से संपर्क किया था। विचारण न्यायालय ने आवेदन खारिज किया। अपील भी खारिज की गई।

उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण याचिका समन की समुचित तामील नहीं होने तथा समाचार पत्रों में प्रकाशन नहीं किए जाने के आधार पर स्वीकार की गई। अतः यह अपील पेश हुई।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करके अभिनिर्धारित किया कि :

1. उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण सही नही था। एक उपधारणा है कि कार्यालयीन कार्य, कार्यवाहियों के सामान्य अनुक्रम में किये जाते हैं। यह स्वीकृत है कि एकपक्षीय डिक्री पारित की गई। प्रतिवादी के लिये इसे अपास्त कराने के लिये यह साबित करना आवश्यक है कि उस पर समन की तामील नहीं हुई अथवा एकपक्षीय वाद की कार्यवाही के लिये नियत पेशी पर अनुपस्थिति का समुचित कारण था। [पैरा 6] [440-ई-एफ]

2. परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 123 में ऐसा आवेदन पेश करने के लिये 30 दिन के समय का प्रावधान है। एक बार तर्क के लिये यह भी मान लिया जाए कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी पर समन की तामील के लिये उचित कदम नहीं उठाया अथवा समन की तामील में अनियमितता थी, फिर भी प्रत्यर्थी/प्रतिवादी को यह साबित करना होगा कि उसे एकपक्षीय डिक्री पारित होने की जानकरी कब हुई। प्रथम अपीलार्थी ने प्रतिपरीक्षण के दौरान स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि वह आवेदन पेश करने से डेढ़ वर्ष पहले डिक्री की पालना नहीं कराने के लिये अपीलार्थी से मिला था और इस प्रकार यह माना जायेगा कि उसे एकपक्षीय डिक्री की जानकारी थी। इस प्रकार परिसीमा अवधि की गणना उस दिन से की जायेगी। जिस प्रकार आवेदन अंतर्गत आदेश 9 नियम 13 सिविल प्रक्रिया संहिता प्रथम अपीलार्थी को एकपक्षीय डिक्री पारित किये जाने की जानकारी होने से डेढ वर्ष बाद पेश किया गया, तो ऐसा आवेदन कालबाधित है। धारा- 3 परिसीमा अधिनियम, 1963 के प्रावधानों के अनुसार किसी भी न्यायालय को

किसी भी वाद या आवेदन की सुनवाई की अधिकारिता नहीं है, जो परिसीमा अवधि की समाप्ति के बाद पेश किया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा ऐसी क्षेत्राधिकारिता के तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती। [पैरा 7, 8 और 9] [440-एफ; 441-सी, डी, ई-एफ]

सिविल अपीलीय अधिकारिता: सिविल अपील संख्या 4881/2007।

पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय चण्डीगढ़ की सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या - 5999/2003 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 14.2.2005 से उद्भूत।

ए. नेहरा, गगनदीप शर्मा, एवं रामेश्वर प्रसाद गोयल अपीलार्थीगण की ओर से।

मनजीत सिंह, बी. के. सतीजा एवं डी. महेश बाबू प्रत्यर्थीगण की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति श्री एस.बी. सिन्हा द्वारा सुनाया गया।

1. अनुमति दी गई।

2. अपीलार्थी हमारे समक्ष पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या - 5999/2003 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 14.2.2005 से व्यथित एवं असंतुष्ट होकर उपस्थित आया है, जिसमें प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत पुनरीक्षण याचिका को स्वीकार किया गया था।

3. अपीलार्थी ने दिनांक 6.4.1985 को या उसके लगभग एक सिविल दावा दायर किया। दावे के समन की तामील प्रत्यर्थी पर हो गई। वह उपस्थित नहीं हुआ। उसके विरुद्ध दिनांक 19.2.1986 को एकपक्षीय डिक्री पारित की गई। उसके आधार पर खातेदारी दर्ज कराने के लिये एक आवेदन पेश किया गया, जो दिनांक 7.3.1996 को स्वीकार किया गया। कथित तौर पर प्रथम अपीलार्थी को एकपक्षीय डिक्री पारित होने की जानकारी दिनांक 3.2.1997 को हुई तो उसने दिनांक 7.2.1997 को एकपक्षीय डिक्री

अपास्त कराने के लिए आदेश 9 नियम 13 सिविल प्रक्रिया संहिता के अधीन एक आवेदन पेश किया। विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 28.7.2000 को यह आवेदन खारिज कर दिया तथा यह अभिनिर्धारित किया कि प्रथम प्रत्यर्थी पर समन की समुचित तामील हुई थी। इसके अतिरिक्त यह भी पाया कि अादेश 9 नियम 13 सिविल प्रक्रिया संहिता की कायर्वाही में प्रतिपरीक्षण के दौरान प्रथम प्रत्यर्थी ने यह स्वीकार किया कि आवेदन पेश किए जाने से डेढ़ वर्ष पूर्व उसने अपने भाई के साथ धर्मसिंह से निर्णय एवं डिक्री को अपास्त कराने के लिए संपर्क किया था, लेकिन वह नहीं माना।

4. इसके विरुद्ध अपील की गई। अपील न्यायालय ने उक्त निष्कर्ष की पुष्टि की तथा अभिनिर्धारित किया कि :-

> "12. इस मामले में प्रदर्श ए1 से प्रदर्श ए3 स्वामित्व के दस्तावेज हैं, जो विवादित नहीं है। प्रदर्श आर 3-1 समन की प्रति है, जिससे प्रकट होता है कि सुभाष ने समन प्राप्त करने से इन्कार कर दिया। यह भी प्रकट होता है कि समन की प्रति भी उसके घर पर चस्पा की गई थी। यह रिपोर्ट प्रदर्श-आर 4/बी न्यायालय के लिपिक द्वारा सत्यापित की गई थी, तथा तामील कुनिंदा जोगीराम द्वारा शपथ पत्र भी दिया गया था और सुभाष को दिनांक 7.5.85 को न्यायालय में उपस्थित होना था, लेकिन वह उपस्थित नहीं आया और उसके बाद न्यायालय ने प्रतिस्थापित तामील का आदेश दिया। गाँव में मुनादी कराने वाले तामील कुनिंदा राममेहर की रिपोर्ट प्रदर्श आर 1, प्रदर्श आर 2 के अनुसार गाँव में मुनादी कराने के बाद भी प्रतिवादी न्यायालय में उपस्थित नहीं हुआ। निःसंदेह चौकीदार नंदलाल ने अपनी अंगूठा निशानी होने के इंकार किया है, लेकिन गवाह आर डब्ल्यू-1 राममेहर,

तामील कुनिंदा के कथनों के आधार पर प्रतिवादी को कोई मदद नहीं मिलती। पत्रावली पर ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं है कि समन पर नंदलाल चौकीदार की अंगूठा निशानी नहीं है। गवाह नंदलाल के बयान स्वयं विरोधाभासी हैं, जहाँ उसने कथन किया है कि उसे तामील कुनिंदा द्वारा सुभाष के घर पर समन चस्पा किये जाने की जानकारी नहीं थी। उसने यह भी कथन किया है कि दस वर्ष पूर्व न्यायालय के कर्मचारियों के द्वारा उसके सामने कोई समन नहीं लाया गया था। उसने मामले के लंबित होने के तथ्य के बारे में अनभिज्ञता प्रकट की है। उसने बारह वर्ष पूर्व की गई मुनादी की कार्यवाही से भी अनभिज्ञ होना जाहिर किया है। उसने यह बताने में भी असमर्थता प्रकट की है कि उसे गवाह बनाया गया था। सुभाष द्वारा समन लेने से इंकार करने के संबंध में तामील कुनिंदा राममेहर के बयानों पर अविश्वास करने के कोई आधार नहीं हैं। प्रत्यर्थी साक्षी-2 अपीलार्थी दिलबाग राय जैन ने भी यह साबित किया है कि प्रतिवादी पर समन की तामील समुचित रूप से निष्पादित की गई थी, जिसे प्रतिवादी ने लेने से इंकार कर दिया। इसलिए समन की तामील कराये जाने में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं है। न केवल प्रतिवादी द्वारा इंकारी के बाद प्रतिवादी के न्यायालय में उपस्थित नहीं आने पर, बल्कि उसके बाद भी विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मुनादी के माध्यम से भी तामील कराई गई है। जब प्रतिवादी जानबूझकर न्यायालय में उपस्थित नहीं आया तो विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 19.2.86 को एकपक्षीय निर्णय एवं डिक्री सही पारित किया है।

13. यह स्वीकृत है कि जिस डिक्री को चुनौती दी गई है, वह वर्ष 1986 में पारित की गई थी, जबकि एकपक्षीय निर्णय एवं डिक्री को अपास्त कराने के लिए आवेदन लगभग ग्यारह वर्ष बाद दिनांक 6.2.97 को पेश किया गया है। जहां तक आवेदन पेश करने में हुए विलंब का संबंध है, निःसंदेह प्रतिवादी ने यह साबित करने का प्रयास किया है कि उसे हाल ही में मामले के निर्णय की जानकारी हुई, परंतु उसका यह तर्क स्वीकार्य नहीं है, जबकि गवाह राममेहर, तामील कुनिंदा ने स्पष्ट रूप से बयान दिया है कि एक-डेढ वर्ष पहले वह अपने भाई के साथ धर्मसिंह के पास गया था आैर धर्मसिंह ने कहा कि उसे विवादित भूखण्ड से कोई सरोकार नहीं है तथा वह डिक्री अपास्त नहीं करायेगा। उसने यह भी बयान किया कि आवेदन पेश करने से 10-11 दिन पहले यह बात उसने अपने रिश्तेदारों को भी बताई थी। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि प्रतिवादी प्रश्नगत डिक्री के बारे में अच्छी तरह से जानता था और वह डिक्री पारित होने के एक माह के भीतर यह आवेदन पेश कर सकता था। उसे प्रत्येक दिन के विलंब को स्पष्ट करना होगा। अतः यह अभिनिर्धारित किया जाना उचित होगा कि आवेदन कालबाधित है। इस प्रकार विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक संख्या- 01 व 02 के संबंध में पारित निष्कर्ष की पुष्टि की जाती है तथा ये विवाद्यक अपीलार्थी/प्रतिवादी के विरुद्ध एवं प्रत्यर्थी/वादी के पक्ष में तय किये जाते हैं।"

5. इसके विरुद्ध प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पुनरीक्षण याचिका पेश की गई, जो उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार की गई। उच्च न्यायालय द्वारा वादग्रस्त निर्णय में राय दी गई

कि अपीलार्थी ने न्यायालय में धोखाधड़ी की, उसने न तो समन की समुचित तामील कराई, न ही समाचार पत्रों में प्रकाशन कराया। उच्च न्यायालय के अनुसार आदेश 5 नियम 19ए सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का सहारा लिया जा सकता था, जिसका उपयोग नहीं किया गया। उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी द्वारा दस वर्ष बाद अर्थात् 1996 में नामांतकरण खुलवाने के आवेदन पर भी प्रतिकूल टिप्पणी की।

6. हमारी राय में उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण सही नहीं है।एक उपधारणा है कि कार्यालयीन कार्य, कार्यवाहियों के सामान्य अनुक्रम में किये जाते हैं। यह स्वीकृत है कि एकपक्षीय डिक्री पारित की गई। प्रतिवादी के लिये इसे अपास्त कराने के लिये यह साबित करना आवश्यक है कि उस पर समन की तामील नहीं हुई अथवा एकपक्षीय वाद की कार्यवाही के लिये नियत पेशी पर अनुपस्थिति का समुचित कारण था।

7. परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 123 में ऐसा आवेदन पेश करने के लिए 30 दिन के समय का प्रावधान है। यह प्रावधान निम्नानुसार हैः-

	वाद का वर्णन	परिसीमा काल	वह समय जब से काल चलना आरंभ होता है।
123	एकपक्षीय पारित डिक्री को अपास्त कराने के लिए या एकपक्षीय डिक्रीत या सुनी गई अपील की फिर से सुनवाई के लिए।	तीस दिन	डिक्री की तारीख या जहां कि समन की सम्यक रूप से तामील नहीं हुई थी, वहां जब डिक्री का ज्ञान आवेदक को हुआ।
स्पष्टीकरण - सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के आदेश 5 के नियम 20 के अधीन प्रतिस्थापित तामील इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिए सम्यक तामील नहीं समझी जाएगी।			

8. इस प्रकार, एक बार तर्क के लिये यह भी मान लिया जाए कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी पर समन की तामील के लिये उचित कदम नहीं उठाया अथवा समन की तामील में अनियमितता थी, फिर भी प्रत्यर्थी/प्रतिवादी काे यह साबित करना होगा कि उसे एकपक्षीय डिक्री पारित होने की जानकरी कब हुई। प्रथम अपीलार्थी ने प्रतिपरीक्षण के दौरान स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि वह आवेदन पेश करने से डेढ़ वर्ष पहले डिक्री की पालना नहीं कराने के लिये अपीलार्थी से मिला था और इस प्रकार यह माना जायेगा कि उसे एकपक्षीय डिक्री की जानकारी थी। इस प्रकार परिसीमा अवधि की गणना उस दिन से की जायेगी। जिस प्रकार आवेदन अंतर्गत आदेश 9 नियम 13 सिविल प्रक्रिया संहिता प्रथम अपीलार्थी को एकपक्षीय डिक्री पारित किये जाने की जानकारी होने से डेढ वर्ष बाद पेश किया गया, तो ऐसा आवेदन कालबाधित है।

9. धारा- 3 परिसीमा अधिनियम, 1963 के प्रावधानों के अनुसार किसी भी न्यायालय को किसी भी वाद या आवेदन की सुनवाई की अधिकारिता नहीं है, जो परिसीमा अवधि की समाप्ति के बाद पेश किया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा ऐसी क्षेत्राधिकारिता के तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

10. उपर्युक्त वर्णित कारणों के आधार पर विवादग्रस्त निर्णय पुष्टि किए जाने योग्य नहीं है। यह तदनुसार अपास्त किया जाता है। अपील मय हर्जाना स्वीकार की जाती है। वकील की फीस रुपये 10,000/- (रुपये दस हजार मात्र) निर्धारित की गई।

अपील स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मनोज मीना (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।